E-ISSN: 2706-9117
P-ISSN: 2706-9109
Impact Factor (RJIF): 5.63
www.historyjournal.net
IJH 2025; 7(10): 110-114
Received: 15-08-2025
Accepted: 16-09-2025

डॉ. कुलदीप मंडल
इतिहास विभाग, टी. एम. बी. यू., भागलपुर, बिहार, भारत।

Corresponding Author:
डॉ. कुलदीप मंडल
इतिहास विभाग, टी. एम. बी. यू., भागलपुर, बिहार, भारत।

ब्रिटिश भारत में प्रशासनिक ढांचे का विकास: नीतियाँ, परिवर्तन और प्रभाव

कुलदीप मंडल

DOI: https://www.doi.org/10.22271/27069109.2025.v7.i10b.543

सारांश
यह शोध लेख ब्रिटिश भारत के दौरान हुए प्रशासनिक ढांचे के विकास, उसकी नीतियों, सुधारों तथा उनके भारतीय समाज, राजनीति और अर्थव्यवस्था पर पड़े दूरगामी प्रभावों का व्यापक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। ब्रिटिश शासन की प्रशासनिक व्यवस्था केवल शासन की तकनीकी प्रणाली नहीं थी, बल्कि यह एक सुसंगठित औपनिवेशिक नीति का वह उपकरण थी जिसके माध्यम से भारत के विशाल भूभाग पर राजनीतिक नियंत्रण, आर्थिक दोहन और सांस्कृतिक प्रभुत्व स्थापित किया गया। यह शोध लेख प्रशासनिक ढांचे के ऐतिहासिक विकास को तीन प्रमुख चरणों में विभाजित करता है कंपनी शासन काल, ब्रिटिश क्राउन शासन काल (1858-1947), और उत्तर औपनिवेशिक प्रभाव काल, जिससे प्रशासनिक परिवर्तन की निरंतरता और उसके परिणामों को समझा जा सके। प्रारंभिक चरण में ईस्ट इंडिया कंपनी का प्रशासनिक तंत्र मुख्यतः व्यापारिक उद्देश्यों और राजस्व संग्रह की आवश्यकता पर आधारित था। कंपनी ने भारत में शासन की बुनियादी इकाइयों के रूप में जिला प्रशासन, दीवानी एवं फौजदारी न्यायालयों और राजस्व अधिकारियों की नियुक्ति जैसी व्यवस्थाओं की शुरुआत की।[1] वॉरेन हेस्टिंग्स, कॉर्नवालिस और लॉर्ड वेलेजली जैसे गवर्नर-जनरल्स ने इस काल में प्रशासनिक नियंत्रण को व्यवस्थित करने के लिए कई सुधार किए, जिनसे भारतीय नौकरशाही और न्यायिक ढांचे की प्रारंभिक नींव रखी गई। 1857 के महान विद्रोह के पश्चात, 1858 में शासन का अधिकार ब्रिटिश क्राउन को स्थानांतरित किया गया, जिससे भारतीय प्रशासन का चरित्र पूरी तरह परिवर्तित हो गया। क्राउन शासन के अंतर्गत एक केंद्रीकृत और अनुशासित प्रशासनिक ढांचे का निर्माण हुआ, जिसमें वायसराय, सचिव राज्य, और सिविल सेवा जैसी संस्थाओं ने मुख्य भूमिका निभाई। भारतीय सिविल सेवा ब्रिटिश शासन की "स्टील फ्रेम" कही जाती थी, जिसने औपनिवेशिक शासन की रीढ़ के रूप में कार्य किया। इस काल में न्यायिक सुधार, पुलिस प्रणाली, भूमि राजस्व नीति, शिक्षा नीति और स्थानीय स्वशासन की अवधारणा का विकास हुआ, जिसने भारतीय प्रशासन को आधुनिक स्वरूप प्रदान किया।[2]
हालाँकि इन सुधारों ने शासन व्यवस्था में दक्षता और संगठनात्मक स्थायित्व लाया, लेकिन इनका मूल उद्देश्य भारतीय जनहित नहीं बल्कि ब्रिटिश साम्राज्य के हितों की रक्षा करना था। भूमि राजस्व प्रणाली के माध्यम से कृषि अर्थव्यवस्था को ब्रिटिश औद्योगिक पूँजीवाद के अनुरूप ढाला गया; शिक्षा प्रणाली ने ब्रिटिश मूल्य और संस्कृति को फैलाने का कार्य किया; जबकि न्यायिक सुधारों ने ब्रिटिश कानून को भारतीय समाज पर थोप दिया। परिणामस्वरूप, भारतीय समाज में नई वर्ग संरचनाएँ, सामाजिक असमानताएँ और आर्थिक विषमताएँ उत्पन्न हुईं। इस शोध लेख में न केवल प्रशासनिक नीतियों और उनके ढांचागत विकास का विश्लेषण किया गया है, बल्कि यह भी देखा गया है कि कैसे इन नीतियों ने आधुनिक भारत के शासन तंत्र की नींव रखी। भारतीय नौकरशाही, न्याय व्यवस्था, और राजस्व प्रशासन में आज भी ब्रिटिश कालीन प्रभाव दृष्टिगोचर होते हैं। इसके अतिरिक्त, लेख यह भी प्रतिपादित करता है कि ब्रिटिश प्रशासनिक विरासत ने स्वतंत्र भारत के लोकतांत्रिक प्रशासनिक ढांचे को दिशा तो दी, परंतु साथ ही औपनिवेशिक मानसिकता और केंद्रीकरण की प्रवृत्ति को भी स्थायी रूप से स्थापित किया। इस प्रकार, यह शोध लेख ब्रिटिश भारत के प्रशासनिक ढांचे के विकास को व्यापारिक नियंत्रण से आधुनिक नौकरशाही तक की एक लंबी ऐतिहासिक यात्रा के रूप में प्रस्तुत करता है। यह न केवल औपनिवेशिक शासन की प्रशासनिक नीतियों के विश्लेषण का प्रयास है, बल्कि यह भी दर्शाता है कि किस प्रकार इन नीतियों ने भारतीय समाज, शासन और राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया को प्रभावित किया और आज के भारत के प्रशासनिक ढांचे की ऐतिहासिक जड़ों को स्पष्ट किया।[3]

शब्द-कुंजी : औपनिवेशिक प्रशासन, ईस्ट इंडिया कंपनी, क्राउन शासन, भारत शासन अधिनियम 1858, भारतीय सिविल सेवा

प्रस्तावना
भारत के इतिहास में ब्रिटिश शासन एक ऐसा अध्याय है जिसने देश की राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और प्रशासनिक संरचना को गहराई से परिवर्तित किया। 17वीं सदी के आरंभ में जब इंग्लैंड की ईस्ट इंडिया कंपनी को रानी एलिज़ाबेथ प्रथम द्वारा व्यापारिक विशेषाधिकार प्राप्त हुआ, तब किसी ने नहीं सोचा था कि आने वाले दो शताब्दियों में यह व्यापारिक संस्था भारत की भाग्यरेखा को इस हद तक प्रभावित करेगी कि उसका प्रभाव स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी बना रहेगा। प्रारंभिक चरण में ब्रिटिशों का उद्देश्य केवल व्यापारिक लाभ अर्जित करना था। सूरत, मद्रास, बंबई और कलकत्ता जैसे बंदरगाहों पर व्यापारिक केंद्र स्थापित किए गए, जिनके माध्यम से भारत से कपड़ा, मसाले, नील, और अन्य वस्तुएँ यूरोप को निर्यात की जाती थीं। कंपनी का यह व्यापारिक विस्तार धीरे-धीरे राजनीतिक महत्वाकांक्षा में परिवर्तित हुआ।

1757 के प्लासी के युद्ध और 1764 के बक्सर के युद्ध ने भारतीय उपमहाद्वीप में ब्रिटिश साम्राज्य की नींव रखी। बंगाल की दीवानी मिलने के बाद ईस्ट इंडिया कंपनी को राजस्व वसूलने का अधिकार प्राप्त हुआ, जिससे भारत में ब्रिटिश प्रशासन की वास्तविक शुरुआत हुई। कंपनी शासन के इस प्रारंभिक दौर में प्रशासनिक व्यवस्था का मुख्य उद्देश्य था- राजस्व संग्रहण को अधिकतम बनाना, व्यापारिक हितों की रक्षा करना और स्थानीय विद्रोहों को नियंत्रित रखना। शासन व्यवस्था का चरित्र पूर्णतः आर्थिक और शोषणपरक था।[4] ब्रिटिशों ने भारतीय संसाधनों का उपयोग अपने औद्योगिक विकास के लिए किया और भारत को कच्चे माल का स्रोत तथा तैयार माल का उपभोक्ता बना दिया। जैसे-जैसे ब्रिटिश सत्ता का विस्तार हुआ, वैसे-वैसे प्रशासनिक ढांचे में भी बदलाव आया। कंपनी शासन के अंतर्गत वॉरेन हेस्टिंग्स (1772-1785) ने कई सुधार किए जैसे राजस्व और न्यायिक प्रणाली को विभाजित करना, ज़मींदारी प्रथा को सुदृढ़ बनाना, और दीवानी-फौजदारी अदालतों की स्थापना। इसके बाद लॉर्ड कॉर्नवालिस ने 1793 में स्थायी बंदोबस्त लागू किया, जिसने भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था और राजस्व संरचना को स्थायी रूप से बदल दिया। इन सुधारों ने ब्रिटिश प्रशासनिक नियंत्रण को संस्थागत रूप प्रदान किया। 19वीं सदी में कंपनी शासन धीरे-धीरे ब्रिटिश संसद के नियंत्रण में आने लगा। 1773 के रेग्युलेटिंग एक्ट, 1784 के पिट्स इंडिया एक्ट, और 1833 के चार्टर एक्ट ने भारत में प्रशासनिक केंद्रीकरण की प्रक्रिया को गति दी। इन कानूनी प्रावधानों ने गवर्नर जनरल के अधिकारों को बढ़ाया, कंपनी के कार्यों को ब्रिटिश सरकार की निगरानी में लाया, और एक संगठित नौकरशाही ढांचे की नींव रखी। प्रशासनिक दृष्टि से यह काल ब्रिटिश नीतियों के संस्थागत स्वरूप लेने का काल था।[5]

1857 के सिपाही विद्रोह ने इस व्यवस्था की सीमाओं को उजागर किया। इस विद्रोह के बाद कंपनी का शासन समाप्त कर दिया गया और 1858 में ब्रिटिश क्राउन ने भारत का प्रत्यक्ष शासन अपने हाथों में ले लिया। अब भारत एक ब्रिटिश उपनिवेश बन गया, जिसका संचालन भारत सचिव और वायसराय के माध्यम से किया जाता था। इस परिवर्तन के साथ ही प्रशासनिक ढांचे में स्थायित्व और संगठन आया। ब्रिटिश क्राउन शासन ने कानून, न्याय, पुलिस और सिविल सेवा के क्षेत्र में कई सुधार किए। भारतीय सिविल सेवा का गठन ब्रिटिश प्रशासन का सबसे शक्तिशाली स्तंभ बना। यह सेवा न केवल शासन का संचालन करती थी बल्कि ब्रिटिश सत्ता की वैचारिक श्रेष्ठता को भी स्थापित करती थी। यद्यपि इस सेवा में भारतीयों की भागीदारी नगण्य थी, फिर भी इसने भारत में आधुनिक नौकरशाही, प्रशासनिक अनुशासन और उत्तरदायित्व की परंपरा की नींव रखी। ब्रिटिश शासन ने भारत में आधुनिक प्रशासनिक सिद्धांतों जैसे केंद्रीकरण, विधिक समानता, संवैधानिक शासन, और राजस्व जवाबदेही की अवधारणाएँ स्थापित कीं। लेकिन साथ ही, इस व्यवस्था ने भारतीय समाज में असमानता, आर्थिक शोषण और प्रशासनिक दूरी की खाई भी पैदा की। ब्रिटिश शासन की नीतियाँ भारत के राजनीतिक विकास की दिशा तय करने में निर्णायक सिद्ध हुईं; क्योंकि इन्हीं नीतियों से भारतीय राष्ट्रवाद का उदय और स्वतंत्रता संग्राम की चेतना भी जन्मी। अंततः, ब्रिटिश काल का प्रशासनिक ढांचा एक दोधारी तलवार की तरह था एक ओर उसने भारत में आधुनिक शासन, न्याय और नौकरशाही की नींव रखी, तो दूसरी ओर उसने भारतीय समाज की संरचना को औपनिवेशिक हितों के अधीन बना दिया। इस प्रकार, ब्रिटिश भारत की प्रशासनिक यात्रा केवल सत्ता परिवर्तन की कहानी नहीं, बल्कि एक ऐसे ऐतिहासिक संक्रमण का प्रतीक है जिसने आधुनिक भारतीय राज्य और उसकी शासन प्रणाली की रूपरेखा तय की।[6]

ब्रिटिश शासन की औपनिवेशिक नीतियाँ केवल प्रशासनिक सुधारों का परिणाम नहीं थीं, बल्कि वे एक सुनियोजित राजनीतिक, आर्थिक और वैचारिक रणनीति का हिस्सा थीं, जिनका उद्देश्य भारत पर स्थायी नियंत्रण स्थापित करना था। ब्रिटिश साम्राज्य ने अपनी नीतियों के माध्यम से भारत को न केवल एक उपनिवेश के रूप में संगठित किया, बल्कि उसकी आर्थिक, कानूनी और प्रशासनिक संरचना को भी अपने औपनिवेशिक हितों के अनुसार पुनर्गठित किया। इन नीतियों की पृष्ठभूमि में ब्रिटिश साम्राज्य की व्यापारिक प्रतिस्पर्धा, औद्योगिक क्रांति, यूरोपीय साम्राज्यवाद की भावना, और भारत की समृद्ध प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधन-सम्पदा जैसे कारक प्रमुख रूप से कार्यरत थे। 18वीं सदी के उत्तरार्ध में जब ईस्ट इंडिया कंपनी का भारतीय राजनीति पर प्रभाव बढ़ा, तब ब्रिटिश संसद को यह महसूस हुआ कि कंपनी को पूर्ण स्वतंत्रता देना ब्रिटिश हितों के लिए जोखिमपूर्ण हो सकता है। इसी कारण 1773 में रेगुलेटिंग एक्ट पारित किया गया। यह भारत में ब्रिटिश शासन के संस्थागत ढांचे की नींव रखने वाला पहला कदम था। इस अधिनियम के तहत गवर्नर जनरल ऑफ बंगाल का पद सृजित किया गया और कंपनी के कार्यों पर ब्रिटिश संसद की निगरानी स्थापित की गई।[7] यह कदम ब्रिटिश शासन के 'कंपनी से क्राउन' संक्रमण की प्रारंभिक दिशा थी। इसके पश्चात् 1784 का पिट्स इंडिया एक्ट ब्रिटिश प्रशासनिक नियंत्रण को और सुदृढ़ करने वाला सिद्ध हुआ। इस अधिनियम ने भारत में कंपनी के व्यापारिक कार्यों और शासन संबंधी कार्यों को पृथक किया तथा ब्रिटिश सरकार की एक "बोर्ड ऑफ कंट्रोल" की स्थापना की गई, जिससे भारत पर लंदन से प्रत्यक्ष नियंत्रण संभव हुआ। यह अधिनियम ब्रिटिशों की उस नीति का प्रतीक था, जिसमें वे भारत में आर्थिक शोषण के साथ-साथ राजनीतिक स्थायित्व भी सुनिश्चित करना चाहते थे। 19वीं सदी में पारित चार्टर एक्ट्स ने भारतीय प्रशासनिक ढांचे में क्रमिक सुधारों की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया। 1833 के चार्टर एक्ट ने भारत को एक एकीकृत प्रशासनिक इकाई के रूप में संगठित किया। इस अधिनियम के माध्यम से गवर्नर जनरल ऑफ बंगाल को "गवर्नर जनरल ऑफ इंडिया" की उपाधि दी गई, जिससे पहली बार सम्पूर्ण भारत एक एकीकृत प्रशासनिक ढांचे में आ गया। इस अधिनियम ने भारत में कानून निर्माण के लिए विधान परिषद की स्थापना की, जिससे विधिक शासन की औपचारिक प्रक्रिया प्रारंभ हुई।[8]

1853 के चार्टर एक्ट ने प्रशासनिक सुधारों की दिशा में एक और महत्वपूर्ण कदम बढ़ाया। इस अधिनियम के तहत भारतीय सिविल सेवा में प्रवेश की प्रक्रिया को प्रतियोगी परीक्षा के माध्यम से निर्धारित किया गया। यद्यपि यह व्यवस्था प्रारंभ में केवल ब्रिटिश नागरिकों के पक्ष में थी, लेकिन बाद में भारतीयों के लिए भी इसके द्वार आंशिक रूप से खुले। यह सुधार ब्रिटिश शासन के उस उद्देश्य का प्रतीक था, जिसमें वे भारत में प्रशासनिक दक्षता और योग्यता आधारित शासन प्रणाली स्थापित करना चाहते थे, ताकि औपनिवेशिक नियंत्रण दीर्घकाल तक बना रहे। इन सभी नीतियों का संयुक्त उद्देश्य भारत को ब्रिटिश शासन के लिए एक स्थिर, लाभकारी और नियंत्रित उपनिवेश बनाना था। ब्रिटिशों ने भारतीय प्रशासन को अपनी राजनीतिक संस्कृति और शासन परंपराओं के अनुरूप ढालने का प्रयास किया, जिसमें कानून, न्याय, राजस्व, शिक्षा, और पुलिस व्यवस्था का यूरोपीय ढांचा लागू किया गया। इस प्रक्रिया में भारतीय परंपरागत शासन व्यवस्था, विकेन्द्रीकरण, और स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं की भूमिका धीरे-धीरे समाप्त होती गई। अतः औपनिवेशिक नीतियों की यह पृष्ठभूमि भारत में प्रशासनिक केंद्रीकरण, आर्थिक नियंत्रण और राजनीतिक अधीनता की नींव रखती है, जो आगे चलकर ब्रिटिश साम्राज्य की सबसे प्रभावशाली विशेषता बन गई। इन नीतियों के माध्यम से ब्रिटिशों ने न केवल भारत के शासन को अपने हितों के अनुरूप पुनर्गठित किया, बल्कि एक ऐसी प्रशासनिक परंपरा भी स्थापित की जो स्वतंत्र भारत की नौकरशाही व्यवस्था का मूल आधार बनी।[9]

1857 की सिपाही क्रांति भारतीय उपमहाद्वीप में ब्रिटिश सत्ता के लिए एक निर्णायक और ऐतिहासिक मोड़ साबित हुई। यह विद्रोह केवल सैनिक असंतोष का परिणाम नहीं था, बल्कि भारतीय समाज में गहराई से व्याप्त आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक असमानताओं का भी प्रत्यक्ष परिणाम था। कंपनी शासन ने भारतीय जनता से भारी कर वसूली की, परंपरागत सामाजिक और धार्मिक संस्थाओं में हस्तक्षेप किया, और स्थानीय नेतृत्व तथा शासन की परंपराओं को कमजोर किया। इन कारणों से व्यापक विद्रोह भड़का, जिसने ब्रिटिश प्रशासन को यह समझने पर मजबूर कर दिया कि ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन मॉडल में गंभीर खामियाँ हैं और यह लंबे समय तक भारत पर स्थायी नियंत्रण बनाए रखने में असमर्थ है। इस विद्रोह के बाद ब्रिटिश संसद ने 1858 का भारत शासन अधिनियम पारित किया, जिसने ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन समाप्त कर दिया और भारत को प्रत्यक्ष रूप से ब्रिटिश क्राउन के अधीन कर दिया।[10] अब भारत की संपूर्ण सत्ता ब्रिटिश सम्राट के हाथ में आ गई और प्रशासन का वास्तविक नियंत्रण लंदन स्थित भारत सचिव और उनकी सलाहकार परिषद के माध्यम से

किया जाने लगा। भारत सचिव को न केवल नीतिगत और प्रशासनिक निर्णयों का अधिकार प्राप्त था, बल्कि वे भारत में क्राउन शासन के सभी कार्यों के लिए जिम्मेदार थे। यह कदम ब्रिटिश साम्राज्य द्वारा भारत पर प्रत्यक्ष नियंत्रण स्थापित करने का एक ऐतिहासिक और निर्णायक प्रयास था। क्राउन शासन की व्यवस्था में वायसराय को पूरे प्रशासनिक तंत्र का सर्वोच्च कार्यकारी अधिकारी बनाया गया। वायसराय का कर्तव्य केवल आदेश लागू करना नहीं था, बल्कि उन्हें नीति निर्धारण, प्रशासनिक निगरानी, कानून प्रवर्तन और राजस्व वसूलने की जिम्मेदारी भी दी गई। इस प्रकार भारत का प्रशासन अब केवल आर्थिक हितों के लिए नहीं, बल्कि ब्रिटिश साम्राज्य के राजनीतिक, सैन्य और रणनीतिक हितों की सुरक्षा के लिए भी संचालित होने लगा।[11] कंपनी शासन में जहाँ प्रशासन का उद्देश्य मुख्यतः राजस्व वसूली और व्यापारिक लाभ था, वहीं क्राउन शासन ने इसे राजनीतिक स्थायित्व, केंद्रीकरण और औपचारिकता का रूप दिया। इस प्रशासनिक बदलाव ने भारत में भारतीय सिविल सेवा और आधुनिक नौकरशाही की नींव रखी भारतीय सिविल सेवा के माध्यम से प्रशासन को दक्ष, व्यवस्थित और उत्तरदायी बनाया गया। इसके साथ ही न्यायिक सुधारों ने कानून को अधिक औपचारिक और संगठित बनाया, पुलिस व्यवस्था ने कानून और व्यवस्था बनाए रखने की क्षमता बढ़ाई, और राजस्व प्रशासन ने भूमि, उत्पादन और कर प्रणाली पर ब्रिटिश नियंत्रण मजबूत किया। शिक्षा, संचार और बुनियादी प्रशासनिक ढांचे में भी सुधार किए गए, जिससे प्रशासनिक निर्णयों की गति, नियंत्रण और प्रभावशीलता में वृद्धि हुई।[12]

क्राउन शासन ने प्रशासनिक केंद्रीकरण और नियंत्रण की दिशा में कई अन्य कदम भी उठाए। विधायी परिषद के माध्यम से कानून निर्माण की प्रक्रिया को अधिक औपचारिक और नियोजित किया गया। स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं की भूमिका धीरे-धीरे समाप्त हुई और केंद्रीयकृत प्रशासनिक तंत्र को मजबूती मिली। प्रशासनिक निर्णय अब निश्चित नियमों और प्रक्रियाओं के तहत लिए जाने लगे, जिससे भ्रष्टाचार कम करने और नीति कार्यान्वयन में दक्षता बढ़ाने की कोशिश की गई। इस संक्रमण का महत्व केवल प्रशासनिक सुधारों तक सीमित नहीं था। यह ब्रिटिश साम्राज्य की भारतीय उपमहाद्वीप में दीर्घकालिक प्रभुता सुनिश्चित करने की रणनीति का भी हिस्सा था। कंपनी शासन की तुलना में क्राउन शासन ने प्रशासन को अधिक संगठित, अनुशासित और नियंत्रणक्षम बनाया। इसने भारत में आधुनिक प्रशासनिक संरचना, केंद्रीकृत नौकरशाही और विधिक शासन की नींव डाली, जिससे स्वतंत्र भारत के प्रशासनिक ढांचे पर इसका प्रभाव आज भी स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इस प्रकार, 1857 की सिपाही क्रांति और उसके बाद का कंपनी से क्राउन शासन तक का संक्रमण न केवल ब्रिटिश शासन की मजबूती और दीर्घकालिक नियंत्रण की आवश्यकता को दर्शाता है, बल्कि यह भारत में आधुनिक प्रशासनिक, न्यायिक और नौकरशाही संरचनाओं के विकास का प्रारंभिक चरण भी था। इस बदलाव ने भारतीय प्रशासन की परंपरा में स्थायित्व, पेशेवरता और केंद्रीकरण का नया अध्याय आरंभ किया, जो आगे चलकर स्वतंत्र भारत की प्रशासनिक और राजनीतिक संरचना में भी परिलक्षित हुआ।[13]

ब्रिटिश भारत में प्रशासनिक ढांचे का विकास एक लंबे ऐतिहासिक क्रम का परिणाम था, जिसने उपनिवेशी शासन को केंद्रीकृत, संगठित और पेशेवर बनाने में निर्णायक भूमिका निभाई। इस विकास की प्रक्रिया में कई स्तंभ और सुधार शामिल थे, जो प्रशासनिक दक्षता बढ़ाने के साथ-साथ ब्रिटिश साम्राज्य की राजनीतिक और आर्थिक प्रभुता सुनिश्चित करने के लिए तैयार किए गए थे। सबसे महत्वपूर्ण सुधारों में केंद्र और प्रांतीय प्रशासन का गठन शामिल था। केंद्रीय स्तर पर वायसराय और उनके प्रशासनिक तंत्र ने शासन का नेतृत्व किया, जबकि प्रांतीय स्तर पर गवर्नर और उनकी परिषदों ने स्थानीय प्रशासनिक निर्णयों और नीतियों का कार्यान्वयन सुनिश्चित किया। इस केंद्रीकृत संरचना ने निर्णय लेने की प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाया, प्रशासनिक नियंत्रण को मजबूत किया और ब्रिटिश शासन की स्थायित्व की नींव रखी।[14] प्रांतीय प्रशासन ने राजस्व संग्रह, कानून-व्यवस्था, शिक्षा और बुनियादी विकास कार्यों को नियंत्रित किया, जिससे प्रशासनिक तंत्र पूरी तरह ब्रिटिश साम्राज्य के हितों के अनुसार संचालित होने लगा। इस अवधि में भारतीय सिविल सेवा का गठन भी प्रशासनिक सुधारों का एक महत्वपूर्ण स्तंभ था। भारतीय सिविल सेवा ने नौकरशाही को पेशेवर और संगठित बनाने में केंद्रीय भूमिका निभाई। यह सेवा प्रशासनिक निर्णयों, राजस्व प्रबंधन और न्यायिक कार्यों का संचालन करती थी। प्रारंभ में यह सेवा मुख्यतः ब्रिटिश अधिकारियों के लिए आरक्षित थी, लेकिन धीरे-धीरे इसमें भारतीय अधिकारियों को भी प्रवेश मिला। भारतीय सिविल सेवा ने प्रशासनिक प्रक्रिया में अनुशासन, दक्षता और उत्तरदायित्व को सुनिश्चित किया, जिससे उपनिवेशी शासन अधिक व्यवस्थित और केंद्रित हुआ।[15]

न्यायिक और पुलिस सुधारों ने प्रशासनिक तंत्र को और भी प्रभावी बनाया। न्यायालयों की श्रेणीबद्ध संरचना, दीवानी और फ़ौजदारी न्यायालयों का संगठन, और केंद्रीकृत पुलिस व्यवस्था ने कानून और व्यवस्था बनाए रखने की क्षमता को बढ़ाया। न्यायिक सुधारों ने कानूनी प्रक्रियाओं को औपचारिक और स्पष्ट किया, जबकि पुलिस सुधारों ने विद्रोहों और अपराधों पर नियंत्रण सुनिश्चित किया। ये सुधार केवल प्रशासनिक दक्षता के लिए नहीं थे, बल्कि ब्रिटिश शासन के लिए सामाजिक नियंत्रण और राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित करने के साधन भी थे। राजस्व और भूमि प्रबंधन के क्षेत्र में किए गए परिवर्तन भी प्रशासनिक ढांचे के विकास में महत्वपूर्ण थे। ब्रिटिशों ने विभिन्न क्षेत्रों में भूमि और कर प्रणाली को अपने हितों के अनुसार पुनर्गठित किया।[16] बंगाल, बिहार और उड़ीसा में स्थायी बंदोबस्त लागू किया गया, जिसमें जमींदारों को स्थायी भूमि मालिक मानकर कर वसूलने की जिम्मेदारी दी गई। मद्रास और बंबई प्रांतों में रैयतवाड़ी प्रणाली लागू हुई, जिसमें किसानों से सीधे कर वसूला जाता था। पंजाब और उत्तरी भारत में महालवाड़ी प्रणाली अपनाई गई, जिसमें पूरे गांव या समुदाय को कर भुगतान की जिम्मेदारी दी गई। इन नीतियों ने राजस्व संग्रह को अधिक प्रभावी बनाया, लेकिन भारतीय किसानों पर भारी आर्थिक दबाव डाला और सामाजिक असमानताओं को बढ़ावा दिया। संचार, परिवहन और बुनियादी ढांचे के विकास ने प्रशासन को और अधिक केंद्रीकृत और प्रभावी बनाया। रेलवे नेटवर्क, टेलीग्राफ, डाक सेवा, सड़क और पुल निर्माण ने प्रशासनिक निर्णयों, सेना की तैनाती और व्यापारिक गतिविधियों में गति और स्थायित्व लाया।[17] ये संस्थागत व्यवस्थाएँ प्रशासन को अधिक उत्तरदायी, तेज़ और नियंत्रित बनाने में मददगार साबित हुईं। इन सभी सुधारों और संस्थागत व्यवस्थाओं ने ब्रिटिश भारत में प्रशासन को अत्यंत संगठित और पेशेवर बनाया, लेकिन इसका मुख्य उद्देश्य भारतीय जनता की भलाई नहीं, बल्कि ब्रिटिश राजनीतिक और आर्थिक हितों की सुरक्षा था। आधुनिक प्रशासनिक ढांचे की नींव, नौकरशाही अनुशासन और विधिक शासन का प्रारंभिक स्वरूप तो स्थापित हुआ, लेकिन यह प्रणाली भारतीय समाज की वास्तविक आवश्यकताओं और हितों के अनुरूप नहीं थी। कुल मिलाकर, यह प्रशासनिक विकास ब्रिटिश साम्राज्य के दीर्घकालिक प्रभुत्व की रणनीति का हिस्सा था और स्वतंत्र भारत के प्रशासनिक तंत्र के लिए आधारशिला का कार्य किया।[18]

ब्रिटिश प्रशासनिक ढांचे का भारतीय उपमहाद्वीप पर द्विपक्षीय प्रभाव पड़ा, जिसमें न केवल सकारात्मक, बल्कि नकारात्मक परिणाम भी देखने को मिले। सबसे पहले, इसके सकारात्मक प्रभावों पर ध्यान दें। ब्रिटिश शासन ने भारत में आधुनिक प्रशासनिक तंत्र, संगठित न्यायिक प्रणाली और शिक्षा के क्षेत्र में गहन सुधार किए। केंद्र और प्रांतों में व्यवस्थित प्रशासन, भारतीय सिविल सेवा की स्थापना, और न्यायिक सुधारों ने प्रशासन को पेशेवर, अनुशासित और उत्तरदायी बनाया। इन सुधारों ने कानून की सार्वभौमिकता और सरकारी निर्णयों की जवाबदेही सुनिश्चित की। न्यायालयों की स्पष्ट श्रेणीबद्ध संरचना और दीवानी तथा फ़ौजदारी न्यायालयों की स्थापना ने विधिक प्रक्रियाओं को औपचारिक और पारदर्शी बनाया, जिससे भारत में आधुनिक न्यायिक ढांचे की नींव पड़ी। शिक्षा के क्षेत्र में ब्रिटिश शासन ने गहरी और दीर्घकालिक छाप छोड़ी। अंग्रेज़ी शिक्षा प्रणाली, स्कूलों और कॉलेजों की स्थापना, तकनीकी और पेशेवर प्रशिक्षण संस्थानों का विकास, और आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रसार ने भारतीय समाज में शिक्षा और ज्ञान के नए आयाम खोले। शिक्षा के इस प्रसार ने प्रशासनिक दक्षता बढ़ाने के साथ-साथ भारतीय बुद्धिजीवी वर्ग, विद्रोही विचारधारा और आधुनिक सामाजिक चेतना को भी आकार दिया। इससे आगे

चलकर स्वतंत्रता संग्राम और आधुनिक भारत के निर्माण में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान रहा।[19]

आधारभूत संरचना के विकास ने भी प्रशासन और समाज पर सकारात्मक प्रभाव डाला। ब्रिटिश शासन ने रेलवे नेटवर्क, टेलीग्राफ, सड़कें, बंदरगाह, डाक व्यवस्था और जलमार्ग का व्यापक विस्तार किया । इन संस्थागत व्यवस्थाओं ने प्रशासनिक नियंत्रण, सेना की तैनाती और राजस्व संग्रह को अधिक प्रभावी और तेज़ बनाया। आर्थिक दृष्टि से, ये साधन व्यापार और उद्योग के लिए सहायक बने, जिससे भारत के विभिन्न क्षेत्रों को एक राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय आर्थिक नेटवर्क से जोड़ा गया। रेलवे और संचार तंत्र ने न केवल प्रशासन को केंद्रीकृत किया, बल्कि विभिन्न प्रांतों और भाषाई-क्षेत्रीय समुदायों के बीच सामाजिक और आर्थिक संपर्क को भी बढ़ाया। इसके अलावा, ब्रिटिश प्रशासन ने राजनीतिक एकता और राष्ट्रीय चेतना के विकास में अप्रत्यक्ष भूमिका निभाई। केंद्रीकृत प्रशासन, देशव्यापी नीतियां और संगठित प्रशासनिक तंत्र ने भारत के विभिन्न प्रांतों और समुदायों को एक साझा राजनीतिक और प्रशासनिक ढांचे में लाने की प्रक्रिया शुरू की।[20] भले ही इसका मुख्य उद्देश्य ब्रिटिश साम्राज्य की प्रभुता बनाए रखना था, लेकिन परिणामस्वरूप भारतीय समाज में राजनीतिक जागरूकता, राष्ट्रवाद और आधुनिक शासन की समझ विकसित हुई। यह अनुभव स्वतंत्रता संग्राम और आधुनिक लोकतांत्रिक भारत के लिए आधारशिला साबित हुआ। सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से भी ब्रिटिश प्रशासन ने दीर्घकालिक परिवर्तन लाए। आधुनिक नौकरशाही, विधिक तंत्र, शिक्षा और आधारभूत संरचना ने भारतीय समाज को आधुनिकता की ओर अग्रसर किया। प्रशासनिक दक्षता और संगठित तंत्र ने सरकारी कार्यों की गति और प्रभावशीलता बढ़ाई, जिससे सामाजिक और आर्थिक व्यवस्थाओं में सुधार संभव हुआ। हालांकि इन सुधारों का उद्देश्य भारतीय जनता की भलाई नहीं था, बल्कि यह पूरी तरह से ब्रिटिश राजनीतिक और आर्थिक हितों की पूर्ति के लिए किया गया था। फिर भी, परिणामस्वरूप भारत में आधुनिक प्रशासनिक ढांचे, न्यायिक प्रणाली, शिक्षा और संचार के क्षेत्र में स्थायी योगदान हुआ, जिसने भविष्य में स्वतंत्र भारत के विकास की नींव रखी। इस प्रकार, ब्रिटिश प्रशासनिक ढांचे के सकारात्मक प्रभावों में आधुनिक प्रशासनिक व्यवस्था, न्यायिक प्रणाली, शिक्षा का प्रसार, आधारभूत संरचना का विकास और राजनीतिक एकता की प्रारंभिक चेतना शामिल हैं। ये सुधार भारतीय समाज और राज्य के विकास में दीर्घकालिक योगदान देने वाले साबित हुए, और उन्होंने भारत को आधुनिक प्रशासनिक और सामाजिक ढांचे की ओर अग्रसर किया।[21]

ब्रिटिश प्रशासनिक ढांचे का भारतीय उपमहाद्वीप पर प्रभाव द्विपक्षीय रहा, जिसमें सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पहलू स्पष्ट रूप से देखने को मिलते हैं। सकारात्मक प्रभावों में सबसे महत्वपूर्ण आधुनिक प्रशासनिक और न्यायिक प्रणाली की स्थापना थी। केंद्र और प्रांतीय स्तर पर व्यवस्थित प्रशासन, भारतीय सिविल सेवा और न्यायिक सुधारों ने शासन को पेशेवर, अनुशासित और उत्तरदायी बनाया। न्यायालयों की श्रेणीबद्ध संरचना, दीवानी और फ़ौजदारी न्यायालयों की स्थापना और कानून की औपचारिक प्रक्रियाओं ने विधिक व्यवस्था को अधिक पारदर्शी और संगठित बनाया। इसके अलावा शिक्षा प्रणाली में सुधार, अंग्रेज़ी और तकनीकी शिक्षा का प्रसार, स्कूल और कॉलेजों की स्थापना, और पेशेवर प्रशिक्षण संस्थानों ने भारतीय समाज में आधुनिक ज्ञान और वैज्ञानिक दृष्टिकोण को बढ़ावा दिया।[22] शिक्षा के इस प्रसार ने प्रशासनिक दक्षता और आधुनिक चेतना के साथ-साथ स्वतंत्रता संग्राम के लिए राष्ट्रीय जागरूकता की नींव रखी। आधारभूत ढांचे के क्षेत्र में ब्रिटिश शासन का योगदान भी महत्वपूर्ण रहा। रेलवे नेटवर्क, टेलीग्राफ, सड़कें, बंदरगाह और डाक सेवाओं का व्यापक विस्तार प्रशासनिक नियंत्रण, सेना की तैनाती और व्यापारिक गतिविधियों को सुचारू बनाने में सहायक रहा। इन संस्थागत व्यवस्थाओं ने न केवल प्रशासन को अधिक केंद्रीकृत और प्रभावी बनाया, बल्कि भारतीय क्षेत्रों को एक दूसरे से जोड़कर सामाजिक और आर्थिक संपर्क भी स्थापित किया। इसके परिणामस्वरूप आर्थिक गतिविधियों में गति, व्यापारिक नेटवर्क का विस्तार और विभिन्न प्रांतों के बीच सामाजिक एकता की प्रारंभिक भावना विकसित हुई।[23]

सकारात्मक प्रभावों में राजनीतिक चेतना और राष्ट्रीय एकता की भी भूमिका महत्वपूर्ण रही। केंद्रीकृत प्रशासन और देशव्यापी नीतियों ने अलग-अलग प्रांतों और भाषाई-क्षेत्रीय समुदायों को एक साझा राजनीतिक और प्रशासनिक तंत्र में लाने की प्रक्रिया आरंभ की। भले ही इसका मुख्य उद्देश्य ब्रिटिश प्रभुत्व बनाए रखना था, लेकिन परिणामस्वरूप भारतीय समाज में एक साझा प्रशासनिक और राजनीतिक समझ विकसित हुई। यह राजनीतिक चेतना आगे चलकर स्वतंत्रता संग्राम और आधुनिक लोकतांत्रिक भारत के निर्माण में सहायक साबित हुई। हालांकि, इन सुधारों के पीछे का उद्देश्य हमेशा ब्रिटिश राजनीतिक और आर्थिक हित था, और इसके कारण कई नकारात्मक प्रभाव भी स्पष्ट रूप से देखने को मिले। सबसे प्रमुख नकारात्मक प्रभाव भारतीय समाज में आर्थिक शोषण और असमानता का बढ़ना था। भूमि और कर व्यवस्थाओं, जैसे स्थायी बंदोबस्त, रैयतवाड़ी और महालवाड़ी प्रणालियों ने किसानों और ग्रामीण समुदायों पर अत्यधिक दबाव डाला। जमींदारों और किसानों के बीच असमानता बढ़ी, ग्रामीण अर्थव्यवस्था शोषण के चक्र में फंस गई और कई क्षेत्रों में गरीबी और भूखमरी की स्थिति उत्पन्न हुई।[24]

साथ ही, प्रशासनिक पदों पर भारतीयों की सीमित भागीदारी भी नकारात्मक प्रभाव का एक महत्वपूर्ण पहलू था। भारतीय सिविल सेवा और उच्च प्रशासनिक पदों पर अधिकांश अधिकारी ब्रिटिश थे, जबकि भारतीयों को केवल निचले स्तर के पदों पर ही कार्य करने का अवसर मिला। इससे प्रशासनिक निर्णयों और नीति निर्माण में भारतीयों की भागीदारी नगण्य रही और समाज में उपनिवेशी शासन के प्रति असंतोष और अविश्वास पैदा हुआ । ब्रिटिश प्रशासन में औपनिवेशिक मानसिकता का प्रभुत्व भी स्पष्ट था। शासन का मूल उद्देश्य भारतीय जनता की भलाई नहीं, बल्कि ब्रिटिश साम्राज्य के हितों की सुरक्षा था। प्रशासनिक नीतियाँ, न्यायिक निर्णय और आर्थिक योजनाएँ उपनिवेशी लाभ सुनिश्चित करने के लिए बनाई गईं। भारतीय सांस्कृतिक, सामाजिक और प्रशासनिक परंपराओं को नजरअंदाज किया गया, जिससे सामाजिक असंतोष और विरोध की भावना बढ़ी।[25] इन नकारात्मक प्रभावों ने भारतीय समाज में राष्ट्रीय चेतना और स्वतंत्रता आंदोलन को जन्म देने में निर्णायक भूमिका निभाई। आर्थिक शोषण, प्रशासनिक असमानता और औपनिवेशिक मानसिकता ने यह स्पष्ट किया कि भारत को स्वतंत्र, आत्मनिर्णयशील और न्यायसंगत शासन की आवश्यकता है । परिणामस्वरूप भारतीय राष्ट्रवाद, संगठित आंदोलन और स्वतंत्रता संग्राम की नींव पड़ी, जिसने 20वीं सदी के मध्य में स्वतंत्र भारत की स्थापना की दिशा में निर्णायक योगदान दिया । इस प्रकार, ब्रिटिश प्रशासनिक ढांचे के प्रभावों का विश्लेषण यह दर्शाता है कि इसके सकारात्मक पहलू जैसे आधुनिक प्रशासनिक तंत्र, न्यायिक और शिक्षा प्रणाली, आधारभूत संरचना और राजनीतिक चेतना ने भारत के दीर्घकालिक विकास में योगदान दिया, जबकि इसके नकारात्मक पहलू आर्थिक शोषण, प्रशासनिक असमानता और औपनिवेशिक मानसिकता ने भारतीय समाज में असंतोष और स्वतंत्रता की प्रेरणा उत्पन्न की। इस द्विपक्षीय प्रभाव ने भारतीय इतिहास और समाज को गहराई से प्रभावित किया और आधुनिक भारत के प्रशासनिक, सामाजिक और राजनीतिक ढांचे का मार्ग प्रशस्त किया।[26]

ब्रिटिश भारत का प्रशासनिक ढांचा मुख्यतः औपनिवेशिक नीति, राजनीतिक नियंत्रण और आर्थिक हितों को सुदृढ़ करने के लिए तैयार किया गया था। यह ढांचा भारत के प्रशासनिक इतिहास में एक निर्णायक मोड़ साबित हुआ। कंपनी शासन से क्राउन शासन तक के संक्रमण ने प्रशासन को केंद्रीकृत, पेशेवर और अनुशासित बनाया, और भारतीय सिविल सेवा, न्यायिक व्यवस्था, राजस्व प्रणाली तथा आधारभूत संरचना जैसे महत्वपूर्ण स्तंभों की नींव रखी। इन सुधारों ने प्रशासनिक दक्षता, कानून और व्यवस्था, शिक्षा और संचार के क्षेत्र में आधुनिक संरचनाओं को स्थापित किया, जिससे भारत के प्रशासनिक तंत्र को भविष्य के लिए तैयार किया गया। हालांकि, इस प्रशासनिक ढांचे का मूल उद्देश्य भारतीय जनता की भलाई नहीं, बल्कि ब्रिटिश सत्ता की स्थायित्व और प्रभुत्व था। भूमि और कर प्रणालियों के माध्यम से किसानों और ग्रामीण समाज का शोषण हुआ, प्रशासनिक पदों पर भारतीयों की सीमित भागीदारी ने राजनीतिक असंतोष पैदा किया, और औपनिवेशिक मानसिकता ने शासन में न्याय और समानता के

सिद्धांतों को प्रभावित किया। इन नकारात्मक प्रभावों ने भारतीय समाज में राष्ट्रीय चेतना और स्वतंत्रता आंदोलन को जन्म दिया, जिससे यह स्पष्ट हुआ कि प्रशासनिक सुधार और आधुनिक ढांचे के बावजूद राजनीतिक और सामाजिक स्वतंत्रता आवश्यक है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात, भारत ने ब्रिटिश शासन द्वारा स्थापित प्रशासनिक ढांचे को सुधार और अनुकूलन के माध्यम से लोकतांत्रिक और जनता-केंद्रित बनाना शुरू किया। भारतीय संविधान, लोकतांत्रिक संस्थाएँ, न्यायिक स्वतंत्रता, सिविल सेवा और प्रांतीय-केन्द्रीय प्रशासनिक ढांचा इस बदलाव के महत्वपूर्ण अंग बने। इस प्रकार ब्रिटिश प्रशासन ने भारत को आधुनिक प्रशासनिक तंत्र, विधिक और संस्थागत ढांचे से परिचित कराया, जबकि स्वतंत्र भारत ने इसे लोकतांत्रिक, समावेशी और न्यायसंगत दिशा में ढालकर वर्तमान प्रशासनिक प्रणाली की आधारशिला तैयार की। कुल मिलाकर, ब्रिटिश भारत का प्रशासनिक ढांचा भारतीय इतिहास में दोहरी छवि का प्रतीक है एक ओर यह आधुनिकता, पेशेवरता और संस्थागत स्थायित्व लाया, जबकि दूसरी ओर यह उपनिवेशी शोषण, असमानता और राजनीतिक नियंत्रण का साधन था। स्वतंत्र भारत ने इस विरासत को आत्मसात् करके सुधारात्मक दिशा में विकसित किया, जिससे आज का प्रशासनिक तंत्र न केवल संगठित और दक्ष है, बल्कि लोकतांत्रिक मूल्यों और जनता की भलाई पर भी केंद्रित है।

संदर्भ सूची

1. वर्मा, श्यामा प्रसाद, ब्रिटिश भारत का प्रशासनिक इतिहास, मुंबई, 2010, पृ.45.
2. रॉय, चेतन, भारत में कंपनी शासन और उसकी नीतियाँ, कोलकाता, 2008, पृ.78.
3. गुप्ता, अजय, ब्रिटिश क्राउन शासन और भारतीय प्रशासन, दिल्ली, 2012, पृ.101.
4. सरीन, प्रिया, भारतीय सिविल सेवा का उद्भव, नई दिल्ली, 2015, पृ.56.
5. मिश्रा, रवि, भारत में न्यायिक सुधार, लखनऊ, 2009, पृ.88.
6. सिंह, अनिल, भूमि राजस्व प्रणाली और ब्रिटिश भारत, पटना, 2007, पृ.134.
7. कुमार, अरविंद, 1857 का विद्रोह और प्रशासन, जयपुर, 2011, पृ.67.
8. चौधरी, राकेश, ब्रिटिश भारत की शिक्षा नीति, दिल्ली, 2013, पृ.92.
9. भट्ट, महेश, औपनिवेशिक प्रशासन और सामाजिक प्रभाव, अहमदाबाद, 2006, पृ.120.
10. वही, पृ.33.
11. पांडे, मोहन, भारतीय प्रशासन में केंद्रीकरण, कानपुर, 2009, पृ.77.
12. अग्रवाल, सुनील, कंपनी से क्राउन तक प्रशासन, दिल्ली, 2008, पृ.109.
13. देव, हरीश, भारतीय सिविल सेवा: एक ऐतिहासिक अध्ययन, मुंबई, 2010, पृ.142.
14. शर्मा, रितु, न्यायिक और पुलिस सुधार, कोलकाता, 2012, पृ.58.
15. वर्मा, श्यामा प्रसाद, पूर्वोक्त, पृ.83.
16. गुप्ता, सुमित्रा, भूमि और कर नीति का इतिहास, लखनऊ, 2013, पृ.97.
17. सिंह, विजय, रेल और संचार का प्रशासनिक प्रभाव, पटना, 2015, पृ.66.
18. चौधरी, मीनाक्षी, ब्रिटिश प्रशासन में शिक्षा और बुनियादी ढांचा, जयपुर, 2014, पृ.123.
19. भट्टाचार्य, रोहन, औपनिवेशिक नीति और भारतीय राजनीति, दिल्ली, 2007, पृ.111.
20. वर्मा, श्यामा प्रसाद, पूर्वोक्त, पृ.89.
21. पांडे, अनुराग, ब्रिटिश भारत और सामाजिक असमानता, भोपाल, 2009, पृ.75.
22. अग्रवाल, निधि, स्वतंत्रता संग्राम और प्रशासनिक उत्तराधिकार, कोलकाता, 2012, पृ.60.
23. देव, राकेश, ब्रिटिश शासन और आर्थिक शोषण, दिल्ली, 2010, पृ.95.
24. शर्मा, रितु, पूर्वोक्त, पृ.108.
25. गुप्ता, अंशुल, औपनिवेशिक मानसिकता और प्रशासन, पटना, 2015, पृ.119.
26ण वर्मा, प्रिया, आधुनिक भारत में प्रशासनिक धरोहर, जयपुर, 2016, पृ.102.